New Man International Journal of Multidisciplinary Studies
(UGC Approved Journal No. 45886)
ISSN: 2348-1390
Impact Factor: 4.321 (IIJIF)

34

सामाजिक परिवर्तन साहित्य से ही संभव है

डॉ, टी, श्रीनिवासुलु
असोसियट प्रोफेसर,
यस, वी, महाविद्यालय, अनंतपुरमु, आन्ध्रप्रदेश

साहित्य समाज का अभिन्न अंग है। साहित्य को अलग नहीं किया जाता है। इसका शाब्दिक अर्थ सहित होना। ''सहितस्य भावः साहित्यं'' जिसका उद्देश्य साथ होना है। ''हितेन सह सहितं'' हित के साथ होना ही साहित्य है। इस शाब्दिक अर्थ से साहित्य का मुख्य उद्देश्य सह-साथ होना, हितं-हित का होना ही साहित्य का अर्थ है। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है - हित किसकी हो? इस प्रश्न का एक ही उत्तर है - समाज का हित। इसलिए साहितय का उद्देश्य समाज का हित ही है। इस संदर्भ में साहित्य साहित्य के लिए या समाज कल्याण केलिए? यह प्रश्न असंगत है। साहित्य का सृजन मनोउल्लास केलिए या मनोभिव्यक्तिकरण केलिए है। व्यक्ति को कुछ न कुछ लाभ हो। व्यक्ति और समाज को लाभान्वित करना ही साहित्य का उद्देश्य है। साहित्य को अंग्रेजी में लिट्रेचर कहते है। लिट्रेचर शब्द लेटर्स से बनी है। अक्षरों से जो भी बनते है व्यापक रुप में उसे साहित्य ही कहते है। परंतु आज साहित्य का अर्थ संकुचित रुप में काव्य केलिए प्रयुक्त हो रहा है। साहित्य का रुप पर ध्यान न दे कर उसकी उपयोगिता पर ज्यादा ध्यान देना है। हमारे लिए साहित्य दो रुपों में विभाजित है, एक काव्य और दूसरा शास्त्र है। कुछ लोग संकुचित दृष्टिकोण से विज्ञान को साहित्य नहीं मानते हैं।

व्यापक दृष्टिकोण से देखा जाय तो, समाज के लिए उपयोगी हर प्रकार की रचना साहित्य मानना होगा। विज्ञान में निहित साहित्यक गुण यथार्थ तक सीमित रह जाते है। काव्य साहित्य में जो कल्पना अपने पंखों से हमे आदर्श की ओर ले जाती है। विज्ञान साहित्य का जो स्वरुप निराशाजनक चेतन रहित वस्तु मात्र है। परंतु काव्य दृष्टि से देखने पर प्रकृति के कण-कण में शिव तत्व दृगोचर हैं। साहित्य का उद्भव हमारे भावनाओं की अभिव्यक्ति केलिए किया जाता है। साहित्य में भावाभिव्यक्तिकरण की प्रबल इच्छा होती है। साहित्य का उद्देश्य आत्मानंद को प्राप्त करना होता है। कवि किसी काव्य की सृजन क्यों कर रहा है। स्वांतः सुखया? या बहुजन सुखाय एवं बहुजन हिताय? इस पर साहित्य का स्थर और उद्देश्य स्पष्ट होते है। साहित्य के उद्भव का मुख्य कारण स्वाभाविक अभिव्यक्ति की मूल मानवीय प्रेरणा ही है। इसी से यह विचार स्वांतः सुखाया जन्मा है। यह एक संकुचित दृष्टिकोण है। केवल स्वार्थ प्रेरणा से उद्भूत काव्य की सृजना मानी जाती है। यथार्थ वादियों को मानना है। साहित्य मानव केलिए आवश्यक नहीं है। जैसे भोजन और पेय जल आवश्यक होते हैं। अर्थ शास्त्रियों का कहना है, यह साहित्य अतिरिक्त शक्ति है। सरप्लस एनर्जि जो शक्ति शरीर में बच जाता है। उसी से साहितय का सृजन करते हैं।[१] साहित्य कोई शारीरिक आवश्यकता नहीं हैं। यह एक सांस्कृतिक आवश्यकता हैं। विशाल दृष्टिकोण से देखने पर साहित्य की आवश्यकता ज्ञात होता है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी कहते हैं -

अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं है।

मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है।[२]

उत्तम साहित्य से ही उत्तम समाज का निर्माण हो सकता है। मनुष्य को मानवीय दुर्बलताओं से ऊपर उठा कर दैवी शक्ति प्रदान करना साहित्य का उद्देश्य है। साहित्य और समाज एक दूसरे पर निर्भर हैं। समाज के रुप को साहित्य में

दर्शाया जाता है। यात्री मेगस्तनीस के ग्रंथ इण्डिका में चन्द्रगुप्त मौर्य के शासनकाल के परिस्थितियाँ सुस्पष्ट दृगोचर होते हैं। समाज के गतिविधियाँ साहित्य के अंश होते हैं। साहित्य का मूल स्त्रोत समाज ही है। साहित्य के लिए आवश्यक कथा वस्तु समाज से ही प्राप्त होते हैं। साहित्य समाज के परिस्थितियों से कल्पना के सहारे आदर्श की स्थापना करती है। उस समय जिनकी अभाव होती है और परिस्थितियों के उत्पीड़न में करने वाली संघर्ष प्रेरणा को जागृत करती है। इसलिए साहित्य से असीम प्रेरणा प्राप्त कर मनुष्य महान बन सकता है। साहित्यकार स्वयं प्रेरणा प्राप्त कर अन्य को प्रेरणा प्रदान करता है। जीवित रहने की, सहर्ष संघर्ष करते रहने की प्रेरणा साहित्य से ही संप्राप्त होती है। साहित्यकार पाठकों के समक्ष दो प्रकार के लक्ष्य स्थापित करता है। वह है - लौकिक और अलौकिक वान्छाओं की पूर्ति। वैयक्तिक हित, पारिवारिक हित, समाज का हित, देश हित और मानवीय हित। इन सभी स्थरों में सबसे उत्तम प्राणिकोटी के हित में विचार करना और उसका पालन करना। अब हमारे समक्ष प्रश्न यह है कि - मानवहित में साहित्य का सृजन होता है या नहीं? साहित्य भाव के द्वारा भावसिद्धात का प्रतिपादन करने पर भी वह यथार्थ से दूर रहने पर ठुकराया जाता है। इसलिए साहित्यकार को सीमा के अंतर्गत ही विचरण करना होगा। यथार्थ के धरातल से ऊपर उठ कर साहित्यकार आकाश में विचरण करने लगता है, तब उस आदर्श को ठुकराया जाता है।

समाज का निर्माण व्यष्टि और समष्टि की ओर अग्रसर होने को मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के द्वारा बनाये गये बन्धन है। इन बन्धनों को आत्म रक्षा के लिए और संतति-विस्तार के लिए बनाये गये हैं। समाज का निर्माता व्यक्ति ही है। परंतु समाज के समक्ष व्यक्ति क्षुद्र होता गया। व्यक्ति की प्रतिष्ठा समाज के प्रतिष्ठा के सम्मुख गौण होता गया है। अंततः व्यक्ति समाज को अपने लिए प्रेरणा प्रदायनी मानने लगा। व्यक्ति की शक्तियों का स्त्रोत समाज हो गया। अन्य प्राणियों के समान मनुष्य भी हाड-मांस-रक्त से बना है। लेकिन उसके लिए हृदय तत्व जो प्राप्त हुई वह एक अद्भुत शक्ति है। जीवन संबन्धि सत्य का ग्रहण करना सत् के अंतर्गत आते हैं। सन्तति विस्तार का मौलिक प्रेरणा काम भावना से होती है। सन्तान और जीवन से संबन्धित राग तत्व चित् के अंतर्गत होगी। जीवन का चरम लक्ष्य आत्मिक आनंद से ब्रह्मानंद की ओर अग्रसर होना आनंद के अंतर्गत होता है। इन तीन तत्वों का समाहित रुप ही भारतीय दर्शन है। सत्-चित-आनंद। इस उद्देश्य की पूर्ति साहित्य से हो पाता है। व्यक्ति का स्वार्थ भाव संकोच से स्वयं रुप धारणा करती है। व्यक्ति का विस्तार उदार भाव समाज रुप धारणा करती है। व्यष्टि हित से समष्टि हित उन्नत होने का कारण है-निस्वार्थ भावना, त्याग, बलिदान आदि। साहित्यकार यथार्थ आदर्शों का निर्माता होता है। समाज के हित ध्येय को अभीष्ट का आदर्श रुप प्रदान कर, इस समाज के गति का निर्देशक होता है। साहित्यकार समय के बन्धनों में बाँधा नहीं जाता है। वह कालजयी होता है। चिर या अचिर के सीमा में वह सीमित नहीं रह जाता है। वह शास्वत सत्य के खोज में निरंतर प्रयत्नशील रहता है। वेद काल में मानवातिरिक्त जगत् की कल्पना कर, दिव्य शिक्तियों को दैवी शक्त मानते है। इसलिए स्तुति, प्रार्थना और हवि युग का विधान बनाये है। शक्तियों को समीकरण करना साहित्य का लक्ष्य रहा। उसी का अनुगामी बने समाज के सदस्य। साहित्य युगानु रुप समाज के परिवर्तन इतिहास अपने में दिखाती है। मानव प्रकृति के तत्वों को साहित्य में स्थान दिया था। वह वेद काल में प्रकृति के उन तत्वों को उपासना किया था।

वैदिक साहित्य में मनुष्य की प्रयोगशाला प्रकृति ही था। वह प्रकृति के कण-कण में आध्यात्मिक तत्व खोज करने लगा। प्रकृति के गोद में जीवन के पाठ सीखने लगा। उस समय के ऋक जो विधि-विधान का पालन करते थे। वही अक्षर रुप

में आगे चलकर साहित्य के रुप धारण कर लिए। प्राचीन वेद साहितय मानव के लिए अनंत ज्ञान राशी प्रदान की है। अनेक युगों से मानव समाज में परिवर्तन जो आ रहा था। वह साहित्य में सुस्पष्ट है। वेद से उपनिषद् ज्ञान को विस्तार रुप से प्रदान किये हैं। भारत देश में ई.पू हजार वर्ष के आस-पास में हिन्दू धर्म के चातुर्वर्ण का प्रभाव अधिक था। समाज में पीड़ित शोशित जनता के दुख को दूर करने के लिए समाज में परिवर्तन वाच्छनीय था। इस क्षतिपूर्ति के लिए जैन धर्म, बौद्ध धर्म उभर आये। यह समाज की माँग थी। हिन्दू धर्म के बन्धनों से मुक्त होना स्वतंत्र मानव के रुप में जीने की प्रयास बौद्ध धर्म से निम्न जातियों को प्राप्त हुआ। इस अधिकार को साधारण जनता तक बौद्ध-जैन साहित्य ले आये। उनको संकुचित भावनाओं से मुक्त करवाने का प्रयास बौद्ध साहित्य के द्वारा संपन्न हुआ है। ई.पू. ५०० वर्ष के समय भारतीय समाज में भारी परिवर्तन आया था। निम्न वर्ग के जनता के लिए एक सहारा बन कर उनके जीवन में गौरवपूर्ण स्थान प्रदान करने का श्रेय त्रिपीठक और जैन साहित्य को जाता है। ई.पू. ग्रीक साहित्य में भी सुकारात और प्लेटो, अरस्तू अपनी अमूल्य साहित्यक संपत्ति के द्वारा समाज को संपन्न बनाये। भारतीय साहित्य में चाणक्य के द्वारा जो आर्य शास्त्र रची गई वह आज भी कार्पोरेट सेक्टर को प्रभावित करती है। बौद्ध साहित्य जो पाली भाषा में सृजन किया गया था, जो समाज को शान्ति संदेश देकर राजनीति, युद्धनीति से मुक्त किया था। इस युगीन साहित्य में मानवीय शक्तियों पर विश्वास जगाने का कार्य हुआ। हृदय जगत् को अधिक महत्व दिया गया। भाईचारा का संगठन हुआ है। संघ का महत्व व्यक्ति से अधिक था। व्यक्ति अपने हृदय के स्वयं शासक होते हुए भी संघ के शरण में गया। संघ के विकास में अपना विकास को ढूढने लगा। इसलिए ''संघं शरणं गच्छामी'' कह कर समाज के शरण में अपने को सुरक्षित माना। उसके पश्चात् हिन्दू धर्म क्षीण होता गया था। द्वितीय शताब्दी में फिर संस्कृत साहित्य के द्वारा देश भर में हिन्दू धर्म का प्रचार हुआ था। गुप्त साम्राज्य के प्रभाव से साहित्य चरम सीमा पर पहुँची। साहित्य के कारण हमारी संस्कृति और सभ्यता का प्रकाश आज भी विद्यमान है। समाज के लिए राजनैतिक आर्थिक उत्तार चड़ाव होते रहते हैं। परंतु साहित्यक प्रभाव अमिट है।

गुप्तकालीन साहित्य में आदर्श को प्रतिष्टित किया गया। राजा और वीर को अधिक महत्व दिया गया है। धर्म भी तलवार के सहारे चलने लगी। राजा लोग धर्म की प्रचार और प्रसार में अपने को धन्य मानने लगे। राज भक्ति को देश भक्ति को जीवन का परम लक्ष्य बनाया गया। साहित्य के लिए कई प्रश्न उत्पन्न हो गये। विषय प्रधानता भी बदलने लगी। मुसलमान शासकों के लिए धर्म प्रचार-प्रसार परमावधि बन गया था। भारतीय समाज में धर्म के प्रति आस्ता कम हो गया था। समाज के लिए पथ प्रदर्शन लुप्त हो गया था। समाज लक्ष्य हीन होना अत्यंत हानिकारक होता है। साहित्य का कर्तव्य तब उभर आता है कि उस समाज का दिग्दर्शन करे। भारतीय समाज के इस संधि काल में संत कबीर, जायसी, सूरदास और तुलसीदास सफलता से समाज का पथ प्रदर्शन कर पाये। इनमें कबीरदास कवि से ज्यादा समाज सुधारक बन कर अज्ञान अंधकार को मिटाना चाहा।

आधुनिक युग में साहित्यकार समस्याओं को वास्तविक रुप में दर्शाना चाहते हैं। इन समस्याओं का हल बताना चाहते हैं। नहीं हो पाया तो सिर्फ उन समस्याओं की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हैं। इस आधुनिक साहित्यकारों का ध्यान अलोक नहीं लौकिक प्रेम से है। वह अध्यात्मिक दृष्टिकोण से कोसो मील दूर है। लौकिक, पदार्थवादी शैली अपनाने से मनुष्य यंत्रवत होता जा रहा है। प्रयोजनवाद की दृष्टि से सब में मतलब ढूँढने लग रहा है। इस से समष्टि से अब व्यष्टि होता गया है। शारीरिक आवश्यकताएँ प्रबल हो रहे हैं। भौतिक और वासनामय यौन संबन्धों को अधिक

महत्व देने के कारण सामाजिक संबन्ध टूटते जा रहे है। समाज के संबन्धों से मुक्त होना चाहता है आधुनिक मानव। उसके लिए विवाह एक बन्धन हो गया है। अब वह सह-जीवन का एक मध्य मार्ग अपना रहा है। मानव अपनी यौन आवश्यकताएँ जिम्मेदारियों के बिना संतुष्ट कर सकता है। यह परिवर्तन समाज के स्वरुप बदलने का कारण है। यहाँ प्रश्न यह है कि - समाज के नियम बदलते जायेंगे। समाज की माँग से साहित्य बदल जायेगी? या साहित्य से समाज बदलेगी? इन दोनों में जो पारस्परिक संबन्ध है वह अटूट है।

समाज में बदलते परस्थितियाँ मानव अपनी दृष्टि से सारे जगत् को समझने का प्रयास किया था। उसके सम्मुख अनेक धर्म उपस्थित थीं। उनको समझने के कार्य में बुद्धि का उपयोग किया। उसे हिन्दू-इस्लाम और अन्य धर्मों में अंतर कम दिखाई देने लगा। वह अनेक मार्ग में से मन चाहा मार्ग अपनाया। साधना के द्वारा वह मुक्ति प्राप्त करना चाहता था। ईश्वरीय राज्य (डिवाइन किंगडम) में स्थान प्राप्ति जीवन साफल्य माना। इस क्रम में कबीरदास, गुरु नानक, दाऊ दयाल, अकबर, तुलसीदास, सूरदास नैतिक आचरण को महत्व दे कर मानव के व्यवहार में सुधार लाये। यह भारत देश में नई क्रान्ति का आरंभ माना जाता है। भक्ति आन्दोलन के द्वारा मानव में आन्तरिक संघर्ष आरंभ हो गया। अन्धविश्वासों के विरुद्ध उसकी सोच बढ़ी। साहित्य ने इस संदर्भ में मनुष्य में निहित शक्तियों को जागृत करना चाहा। प्रकृति शक्तियों का उपयोग और सामाजिक शक्ति की बढ़ौती, यह साहित्य का लक्ष्य हो गया। साहित्य इस क्रम में निराकार शाश्वत आनंद (मोक्ष) को अपना लक्ष्य बनाना था। स्वयं जयशंकर प्रसाद जी भी अपनी कृति कामायनी में आनंदवाद को अपनाये। परंतु भौतिक वादियों का अड्डा कहलानेवाली पाश्चात् सभ्यता से प्रेरित साहित्य, विषय वस्तुओं को अधिक महत्व दिया। इसका फलस्वरुप आज विश्रृंखलता और उपभोगवाद व्याप्त हुई है। साहित्य का चरम लक्ष्य लोक कल्याण ही है। स्वामी विवेकानंद भारतीयों को अपनी ओजस्वी वाणी से व्यक्तित्व का परिष्कृत रुप प्रदान करना चाहता है। व्यक्ति विकास और समाज विकास साहित्य का कर्तव्य है।

इस संसार में पूँजीवादियों को बोलबाल कम करने में साहित्यकार का ही कार्य कुशलता है। जहाँ क्रान्ति या आन्दोलन की आवश्यकता होगी वहाँ कवि उपस्थित हो जाता है। समाज में जो उत्पीड़न है उसके विरुद्ध आवाज उठाकर क्रान्ति के अंकुर बोने वाले कार्ल मार्कस की आवाज संसार के अनेक देशों में गूँज उठी। प्रकृति के रस रम्य रुप को परिचय दिलवाने का श्रेय रुसो को जाता है। मानव को प्रकृति के गोद में रह कर उसमें ही रमने का विचार, अपनी रचना ''ईमली'' के द्वारा सफलता से व्याप्त कर पाये है। रुस में जार सम्राट के आकृत्यों के विरुद्ध आवाज, माक्सिम गोर्की अपनी रचना ''मदर'' से उठाथे। ऐसी रचनाएँ जो लेनिन जैसे क्रान्ति वीरों को भी प्रेरणा प्रदान कर सके हैं।

भारत देश में अन्धविश्वास के विरुद्ध समाज परिवर्तन के कार्य का श्रीगणेश राजा राम मोहन राय ने किया था। वे अपनी वाणी साहित्यक पत्रिका के द्वारा जनता में परिवर्तन लाये। उन दिनों में उनकी पत्रिका ''कौमुदी'' का पठन पाप माना जाता था। परंतु कौमुदी धीरे-धीरे समाज को सुधार ने में सफल हुई। दयानंद सरस्वती अपनी रचना सत्यार्थ प्रकाशिनी के द्वारा भारतीय समाज को प्रभावित कर सके। विधवा-विवाह, बाल्य-विवाह, सती-प्रथा, दहेज-प्रथा इन सब पर अंकुश साहित्य ने लगाया। स्वतंत्रता संग्राम में आनंदमठ जैसे अनेक रचनाएँ आम भारतीय के हृदय में औसला बढ़ाएँ। देश को दास्य श्रृंखलाओं से विमुक्ति दिलवाने का श्रेय साहित्य को ही है। देश में फैली बेरोजगारी, अशिक्षा, मद्यपान, दहेज-समस्या, स्त्री शिक्षा जमींदार-किसान के संबन्धों को प्रेमचन्द ने अपनी रचनाओं में स्थान दिया था। जब-जब समाज की गतिविधियाँ अपनी पटरियों से हटे,

तब-तब साहित्य समाज के डगमगाते कदमों को शक्ति प्रदान की। जाति-पाँति के भेद भाव से समाज में दरार आने पर साहित्य उसकी मरम्मत की है।

वर्तमान युग में समाज के सम्मुख कई चुनौतियाँ हैं। आतंकवाद, भ्रष्टाचार, बढ़ती जनसंख्या, एड्स जैसे अनेक समस्याएँ समाज को खोखला कर रहे हैं। इन समस्याओं को सुलझाने में साहित्य सहायक सिद्ध होना है। इतना ही नही जब जनता दिशा-विहीन होने पर, समाज के लिए दिशा निर्देशन साहित्य से ही होता है। मनुष्य में जो पशु प्रवृत्ति, समाज को जटिल बना देती है। क्रूरता समाज को विनाश की ओर ले चलती है। असभ्य से सभ्यता के मार्ग पर मानव, साहित्य रुपी लाटी के सहारे चलता आया है। स्वयं बापूजी बताए है कि-टालस्टाय और जान रस्किन के कारण, वे बहुत परिवर्तित हुए है। मानव को महात्मा बनाना साहित्य से ही संभव है। तुलसीदास के मर्यादा पुरुषोतम श्री रामचन्द्र सहस्र कोटी भारतीय के व्यक्तित्व के निर्माता रहे। आज भी नव युवकों के व्यक्तित्व निर्माण में अरुंदती राय, राबिन शर्मा, शिव खेर जैसे साहित्यकार भागीदार है।

साहित्य समाज के लिए अनिवार्य लक्षणों को स्वीकारना होगा। समाज के समस्याओं के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया साहित्य की ओर से होना है। साहित्य समाज केलिए औषधी के समान है। सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध लडने की एक ऐसी संजीवनी शक्ति साहित्य भर सकती है। समाज-कल्याण के उद्देश्य से साहित्य का सृजन होता है। पण्डितों को आकृष्ट करने वाली पारमार्जित रुप धारण करे। जन साधारण के लिए भी उपयुक्त सरलता इस में होनी चाहिए। लोकमंगल भावना, साहित्य के द्वारा प्रसार हो। कोमल कान्त पदावली के द्वारा मानव मन को पिघला कर पत्थर को मूर्ति रुप प्रदान करने का कार्य, साहित्य के द्वारा हो पाता है। साहितय के बिना समाज, भौतिक वादिता से, स्वार्थपूर्ण आचरण से अत्यंत हेय स्थिति को पहुँच चुकी होती।

साहित्यकार इस सृष्टि और समाज का निर्देशक मानना असंगत नहीं है। भौतिकवादियों के बन्धनों से मुक्त करवाने, भावनों को विनील आकाश में विचरण करवाता है। निश्क्रिय भ्रान्तिमान असत् को दूर कर सत् की ओर ले चलना अपना अभीष्टक होता है। हम सब को अज्ञान अंधकार में देखकर ज्ञान रुपि ज्योतिपुंज की ओर अग्रसर होने प्रेरणा देता है। साहित्यकार इस समाज को बनाने में उन्नति के शिखर पर ले जाने में समर्थ है। साहित्यकार समाज का अवन्नति के गर्त से ऊपर उठाने में सफल हो सकता है। नश्वर, अचिर इस सृष्टि को शास्वत तत्व प्रदान करने अमृत तत्व को प्राप्त कर लेना हमारा लक्ष्य कह कर उद्धीप्त करता है। मृत्यु भय से हमें मुक्त कर अमरत्व सिद्धि करने को प्रेरणा प्रदान करता है। इस समाज के लिए वह स्रष्टा है। सामाजिक परिवर्तन साहित्य का उत्कृष्ठ लक्ष्य है।

असतो मा सद्गमया।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।।
मृत्योर्मामृतं गमय।
ऊँ शांति शांति शातिः।।[3]

संदर्भ सूचि

1. Making of Literature – The Scot James. Page 22
2. साहित्य की महत्ता – महावीर प्रसाद द्विवेदी Page 3
3. उपनिशद भाांति मंत्र

❑❑❑